ठुमरी शैली की उत्पत्ति एवं विकास*

© Copyright IGNCA, Sunil Jha
All rights reserved. No part of this may be reproduced or transmitted in any form or by any means, electronic or mechanical, including photocopy, recording or by any information storage and retrieval system, without prior permission in writing.

वाराणसी वैभव या काशी वैभव - सुनील कुमार झा

ठुमक, ठुमक, ठुमिकि, ठुमकना आदि शब्दों की लुभावनी परिकल्पना के अनुसार साहित्यिक भाषा के गेय पदों को जिनमें श्रृंगार, वात्सल्य, विरह, शान्त इत्यादि विभिन्न रसों का सन्निवेश होता है, ठुमरी की संज्ञा दी गई है। गोस्वामी तुलसीदास रचित 'ठुमुकि चलत रामचन्द्र बाजत पैजनियाँ।' 'कौशल्या जब बोलन आई, ठुमुकि ठुमुकि चले प्रभु पराईं।' सन्ताशिरोमणि सूरदास रचित- 'चलति देख जसुमति सुख पाई। ठुमक-ठुमक धरती चलि ब्रज ठाकुर पै, ठुमुका ठुमुकी ठुमकी ठकुराई।' इत्यादि अनेक सहृदय कवियों के असँख्य गेय भक्तिमय पदों के एक-एक सरस शब्दों का दिग्दर्शन, पद संचालन, मृकुटी, नेत्र, हस्त, कलाई, कमर, ग्रीवा, हस्तक द्वारा पूर्ण हाव भाव सहित गायन एवं नर्तन ही इस अभिनव ठुमरी गायन शैली का मूल आधार रहा है, इसमें कोई संदेह नहीं है। इस गायन शैली के उपयुक्त भक्तिमय पदों की रचना में सगुण उपासक धारा के सन्त, भक्त, कवियों, मनीषियों का विपुल योगदान भारतीय संगीतकला को प्राप्त हुआ तुलसीदास, सूरदास, कबीरदास, मीरा, पहाकर आदि मात्र कविही नहीं थे, उन्हें भारतीय संगीत का भी विशिष्ट ज्ञान था। इनकी गेय रचनाओं में ताल, राग आदि का निर्देश उनके संगीतज्ञान का प्रत्यक्ष प्रमाण है। इन पदों के रागमय, ताल-बद्ध माध्यम से अपने अपने इष्ट की पूर्ण तन्मयता से आराधना कर ब्रह्मनन्द की प्राप्ति ही इनका मुख्य लक्ष्य था।

जिस समय देश में तत्कालीन शासनों द्वारा विदेशी संस्कृति जबरन जनसामान्य पर थोपी जा रही थी, तो इन कवियों के भक्तिमय पदों ने भारतीयता, भारतीय संस्कृति, भारतीय धर्म की रक्षा के लिए भारतीय जनजीवन में नवीन चेतना एवं स्फूर्ति प्रदान करते हुए पुनः भयभीत, आक्रान्त जनमानस में नवीन रक्त संचार कर देश, धर्म, संस्कृति को नष्ट-भ्रष्ट होने से बचा लिया और इस प्रकार इस छोरसे उस छोर तक सम्पूर्ण भारत अपने इन महान् कवियों के भक्तिमय पदों के सरस वातावरण से प्रमुदित, प्रफुल्लित उत्साहित होकर नर्तन कर उठा।

ठुमरी गायकी की उत्पत्ति का मूल स्थान जो भी हो, किन्तु प्राचीन सरस कवियों के रचित भक्तिमय पदों का पूर्ण भावसहीत गायन, नर्तन एवं प्रदर्शन इसके मूल आधार रहा है, यह ठोस प्रमाण है। संगीत की इस गायन शैली की मनमोहक बन्दिशों के रचनाकार के रूप में लखनऊ नृत्य घराने के विद्वान् श्री ठाकुर प्रसाद मिश्र ठुमरी के लालित्य एवं भक्तिमय पदों की रचना करने वाले प्रथम जनक के रूप में सामने आते है, जिनकी समस्त रचनाएँ भगवान कृष्ण के चरित्र से ओत-प्रोत और इन्हीं को समर्पित हैं। ठाकुर प्रसाद जी लखनऊ घराने के महान् नर्तक कालिका-बिन्दादीन जी के चाचा थे, जो अपनी स्वरचित बन्दिशों को भिन्न-भिन्न रागों एवं तालों में गाकर और नृत्य द्वारा एक-एख शब्द का अनेक कल्पनाओं से युक्त भावाभिनय बताकर संगात प्रेमियों को किंकर्त्तव्यविमूढ़ कर देते थे।

लखनऊ की यह अल्हड़ किशोर चपल एवं द्रुतलय-युक्त ठुमरी गायकी जब गोमती का किनारा छोड़ काशी आई और यहाँ की शान्त, सौम्य माँ गंगा का स्नेहिल परम पवित्र रूप देखा, नमन कर स्पर्श किया, तो मानों काशी तक की यात्रा की सारी थकान अपने आप दूर हो गई प्रतीत हुई और स्वप्निल सुखद अनुभव से स्वयं रोमांचित हो उठी। काशी का संगीतमय वातावरण, माँ गंगा की शान्त-सौम्य धारा, काशी के संगीतज्ञों तथा समस्त संगीत प्रेमियों का अटूट प्यार उसे इतना भाया, कि उसने लखनऊ तहजीब की भारी भरकम दरबारी पोशाक चिकन, समीज, चूड़दार पाजामा, ओढ़नी को स्वतः छोड़ दिया, द्रुतलय युक्त चपल चाल की ठुमरी ने चँचलता त्याग लज्जाशील शआली नारी के उपयुक्त बनारसी नयनाभिराम रेशमी साड़ी के आवरण में अलंकृत होकर नये श्रृंगार द्वारा एक नवीन स्वरूप धारणकर धार, गम्भीर विलम्बित लयकी आश्रित हुई। सचमुच गोमती को अपनी गंगा से मिलकर विशेष तृप्ति तथा अपूर्व शान्ति प्राप्त हुई। यही ठुमरी काशी की गंगा किनारे से झिझकती, सहमती, शआलीन चाल से धीरे-धीरे विश्वनाथ गली पार कर चौक, नारियल बाजार, एक झलक दाल मण्ड़ी का लेती हुई छत्तातले, मछरहटाटा फाटक आदि मुहल्लों में कई पीढ़ियों से बसी संगीत साधना में रत गुणी गायिकाओं का अपार स्नेह प्राप्त करती हुई, जो विन्द पुरा, राजादरवाजा तक सहजतापूर्वक चली आई अवश्य, किन्तु अवध की सर-जमीन को छोड़कर काशी आने का मुख्य ध्येय तो था- काशी नगरी का गौरव, संस्कृतिक संगीत गढ़ मुहल्ला कबीर चौरा, जहाँ के गुणी संगीतज्ञों की ममतामयी स्नेहिल गोद पाकर ठुमरी एक अबोध शिशु की भाँति किलक उठी और आश्वस्त हो गई। वह यहीं से नवीन रूप में पुष्पित, पल्लवित होकर पूरे विश्व में सुमन सुगन्धि की तरह व्याप्त हो गई। यहाँ के रंगीले, रसीले, भावुक, उदार, गुणी संगीत-विद्वानों ने ठुमरी को बनारसी पैनेपन के विशिष्ट रंग में रंगकर बोल बनाव, बोल-बाँट, बन्दिश की ठुमरी के रूप में श्रृंगार, करूण, शान्त रस से ओतप्रोत करके ऐसा हृदयग्राही स्वरूप में प्रस्तुत किया जो पत्थर हृदय को भी पिघलाकर मोम कर देने की क्षमता रखने लगी बशर्ते जगदीप मिश्र, मौजुद्दीनखाँ, भैया साहब गनपत राव, गोहर जान, मैना, विद्याधरी, हुस्ना, बड़े रामदास मिश्र, छोटे रामदास मिश्र,

© Copyright IGNCA, Sunil Jha
All rights reserved. No part of this may be reproduced or transmitted in any form or by any means, electronic or mechanical, including photocopy, recording or by any information storage and retrieval system, without prior permission in writing.

वाराणसी वैभव या काशी वैभव - सुनील कुमार झा

काशी, रामू मिश्र सरीखे संगीत साधनारत समर्पित साधक तो हों। निसंदेह वज्र को भी नवनीत कर देने की अपूर्व क्षमता इस विशिष्ट गायकी में विद्यमान है।

ठुमरी मुख्य रूप से भैरवी, सिन्धु भैरवी, काफी पीलू, खयाल, तिलंग, सिन्दूर झिंझोटी, देश, बिहारी तिलक-कामोद, तिलक बिहारी, गारा, जिला, सोरठ, बिहाग, मौड, आसा सावनी, धानी, बखा, शिवरंजनी, जोगिया, कालिंगड़ा, सोहनी माज-खमाज आदि रागों में मुख्य रूप से गाई जाती है।

ठुमरी गायन शैली मुख्यतः दो तरह की प्रचलित है-

(१) पंजाबी अंग की ठुमरी (२) पूरब अंग की ठुमरी- इस अंग में लखनऊ, बनारस एवं गया की शैली प्रचलित है। पंजाब की चपलता आदि गुणों की अधिकांश विशेषता लखनऊ ठुमरी गायन शैली में पाई जाती है। चंचलता, चपलता, खमका, मुर्की, खटका की बहुलता एवं स्वरों पर कम ठहराव आदि यहाँ की ठुमरी की मुख्य विशेषताएँ है। किन्तु गम्भीरता, शालीनता, स्वरों पर ठहराव, चैनदारी, सार्थक बोलों को लेकर भिन्न-भिन्न ढंग की मनमोहक उपज एवं विलम्बित लय में ठुमरी गाने की शैली का मौलिक स्वरूप बनारस घरानो की अपनी निजी-विशेषता और विशिष्टता है। गया की ठुमरी गायकों में बनारस घराने की विशेषताओं का उचित समन्वय स्पष्ट परिलक्षित होता है।

इ स प्रकार बनारस की संगीत-परम्परा में अन्य शैलियों के साथ-साथ ठुमरी गायकी की एक विशिष्टतम मौलिक परम्परा भी सदेयों से चली आ रही है। इस गायकी के इस सिद्ध गायक के रूप में जगदीप मिश्र, मौजुद्दीन खाँ, बड़ी मैना, विद्यापति, हुस्ना, राजेश्वरी, बड़ी मोती, काशी, सरस्वती, जद्यनबाई, जवाहर, छोटी बीबी, सिद्देश्वरी, रसूलन बड़े रामदास, छोटे रामदास, महादेव मिश्र, गिरिजा देवी, रामाजी गुजराती, एवं श्री नन्दलाल तथा बिसमिल्ला खाँ सरीखे शहनाई वादकों ने एवं सुप्रसिद्ध सारंगी वादकों ने अपनी विश्व प्रसिद्ध ख्याति एवं अपार लोकप्रियता से काशी की संगीत परम्परा की एक अनूठी पहचान संगीत जगत् में बनाई है, जिसे भविष्य की उदीयमान पीढ़ी के संगीत साधक भी अपनी संगीत-साधना से प्रज्वलित कर पूर्वजों द्वारा स्थापित सांस्कृतिक वर्चस्व को अक्षुण्ण बवाए रखेंगो, इसमें कोई संदेह नहीं।

बनारस घराने की एक विशेषता यह रही, कि यहाँ के संगीतज्ञों ने संगीत की प्रत्येक विद्या के प्रति विशेष रूचि के साथ उसे आत्मसात् किया, फिर बनारस की निजी मैलिकता से उसे ओत प्रोत किया, उसमें उचित सुधारक नवीन स्वरूप में उसे ढ़ालकर सौंदर्य में श्रीवृद्धि की और अपनी साधना से तरशकर जब उसे जनसाधारण के समक्ष प्रस्तुत किया तो लोग सुनकर आत्मविस्मृत हो उठे। इस प्रकार ठुमरी गायकी पर भी बनारसी परम्परा के गायकों वादकों ने न केवल अधिकार प्राप्त किया, अपितु उसे सर्वदा के लिए अपना बना लिया।

* ठुमरी की उत्पत्ति, विकास और शैलियाँ-लेखक-शत्रुघ्न शुक्ल प्रकाशक-हिन्दी माध्यम कार्यन्वय निदेशालय दिल्ली विश्व विद्यालय

© Copyright IGNCA, Sunil Jha
All rights reserved. No part of this may be reproduced or transmitted in any form or by any means, electronic or mechanical, including photocopy, recording or by any information storage and retrieval system, without prior permission in writing.